विपश्यना

साधकों का मासिक प्रेरणा पत्र

बुद्धवर्ष २५३० जेष्ठ पूर्णिमा ११ जून १९८७ वर्ष १६ अंक १२

धम्म वाणी

एतदत्तनि सम्भूतं, ब्रह्मयानं अनुत्तरं।
निय्यन्ति धीरा लोकम्हा, अञ्ञदत्थु जयं जयं॥

जानुस्सोणि ब्राह्मणसुत्तं,
संयुत्त निकाय, मग्ग संयुत्त।

स्वयं ऐसे सर्वोत्तम ब्रह्मयान बन कर धीर पुरुष लोकों से पार हो जाते हैं और परम अवस्था प्राप्त कर जय-विजय साध लेते हैं।

बुद्ध और धर्म

जब कोई व्यक्ति सम्यक् सम्बुद्ध बनता है, चाहे सिद्धार्थ गौतम हो अथवा कोई और, तो वह कदापि कोई सम्प्रदाय स्थापित नहीं करता। शुद्ध धर्म ही लोगों को सिखाता है। शुद्ध धर्म याने कुदरत का वह कानून जो सब पर एक जैसा लागू होता है, जो किसी का पक्षपात नहीं करता। विश्व में कोई बुद्ध बने या न बने, यह कानून सदैव अपना काम करते रहता है। पर जब कोई व्यक्ति बुद्ध बन जाता है तो स्वानुभूति से इस कानून की बारीकियों को जान लेता है और दुखियारी जनता, जो इसे भूल बैठी थी, उसे समझाता है। धर्म धारण करने की प्रेरणा और उपाय देता है। कालान्तर में लोग अनुभूतियों से समझ में आनेवाली इन बारीकियों को खो बैठते हैं और उस शिक्षा को महज भावावेश या बुद्धिविलास का विषय बना लेते हैं। तब इसी से भिन्न भिन्न संप्रदायों का प्रजनन और संगठन होने लगता है।

* * *

भगवान गौतम बुद्ध के जीवनकाल की एक घटना।

उन दिनों जानुश्रोणी नामका एक अत्यंत धनवान ब्राहमण श्रावस्ती में रहता था। लगता है लोगों पर अपने धनवान होने की छाप डालने के लिए वह कभी कभी अपने वैभव का प्रदर्शन किया करता था। एक बार वह अत्यंत मूल्यवान और चित्ताकर्षक रथ पर सवार होकर नगर में से गुजरा। लोगों ने देखा उसके रथ में दो उजले सफेद घोड़े जुते हैं। रथ भी उजला सफेद और उसके सारे साज भी उजले सफेद। लगाम, चाबुक, चंदवा, गादी सभी उजले सफेद। और स्वयं जानुश्रोणी भी उजले सफेद वस्त्र और उजले सफेद जूते पहने था। उस पर उजले सफेद चँवर डुलाए जा रहे थे।

यह दृश्य देखकर लोग कहने लगे, "कितना सुन्दर रथ है मानो ब्रह्मयान ही धरती पर उतर आया हो!"

भिक्षाटन के लिए गए भिक्षु आनंद ने यह सब देखा, सुना तो गोचरी से लौटने पर, जेतवन पहुँचकर उसने भगवान बुद्ध से पूछा, "भन्ते भगवान! बुद्धों की धर्म-शिक्षा में ब्रह्मयान की क्या व्याख्या है?"

भगवान ने कहा, "यह जो आर्य आष्टांगिक मार्ग है, यही ब्रह्मयान है, यही धर्मयान है, यही सर्वोत्तम संग्राम विजय है।"

सम्यक् सम्बुद्ध आर्य आष्टांगिक मार्ग ही सिखाते हैं। शील, समाधि, प्रज्ञा का सार्वजनीन मार्ग। यही धर्मयान है। यही ब्रह्मयान है। इस यान (याने रथ) पर सवार हो साधक आर्यमार्ग की यात्रा करता है। अपने भीतर के तीनों दुश्मन— राग, द्वेष और मोह पर प्रहार करता है। उन्हें परास्त कर देता है, समाप्त कर देता है और इस सर्वोत्तम संग्राम-विजय द्वारा मुक्ति, मोक्ष, निर्वाण के अंतिम लक्ष्य पर पहुँच जाता है। ब्रह्मयान याने आर्य आष्टांगिक मार्ग इसी हेतु है।

अपने साढ़े तीन हाथ की काया में तन और मन के प्रपंच का समतापूर्वक यथाभूत निरीक्षण करते हुए साधक अपने दर्शन को सम्यक् करता है। इसी प्रकार अपने चिंतन मनन को, अपने वाचिक कर्मों को व आजीविका को सम्यक् करता है। वह अपने पुरुषार्थ को सजगता को और समाधि को सम्यक् कर लेता है। आर्य मार्ग के इन आठ अंगों को सम्यक् करके वह अपने भीतर के राग, द्वेष और मोह को जड़मूल से उखाड़ फेंकता है।

ऐसे धर्मयान पर सवार होकर कोई भी व्यक्ति संग्राम विजयी हो सकता है और जीवनमुक्त अर्हंत की उस अवस्था पर पहुँच सकता है जहाँ उल्लासभरे चित्त से यह घोषणा कर सके कि—

" विक्खीणो जाति संसारं नत्थिदानी पुनब्भवो । "

मेरा भव संसार नष्ट हुआ। अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा ।

धर्मयान पर यात्रा करनेवाला व्यक्ति कोई भी हो। सारिपुत्र ब्राह्मण हो अथवा अनिरुद्ध क्षत्रिय हो अथवा भल्लिय वैश्य हो अथवा उपालि नाई हो अथवा सुनीत भंगी हो अथवा सोपाक चांडाल हो अथवा अंगुलिमाल हत्यारा हो अथवा अम्बपालि वेश्या हो, हरएक के लिए धर्मयान वही है। आर्य आष्टांगिक मार्ग वही है जो कि हर एक को वीतराग, वीतद्वेष और वीतमोह बनाकर गंतव्य मोक्ष अवस्था तक पहुँचा देता है, जरा भी भेदभाव नहीं करता ।

भगवान ने इस धर्मयान की विशद व्याख्या करते हुए कहा,– " ऐसा है यह धर्मयान जिसमें श्रद्धा और प्रज्ञा धर्म सदैव जुते रहते हैं। लज्जा जिसका दंड है, मन जिसकी लगाम है और स्मृति (सजगता) जिसका रक्षक सारथी है, शील जिसकी सजावट है, ध्यान जिसका अक्ष है, वीर्य (पुरुषार्थ) जिसके चक्के हैं, समता और समाधि जिसकी धुरी हैं, निष्कामता जिसका चंदोवा है, अद्वेष अहिंसा, विवेक जिसके अस्त्र–शस्त्र हैं। सहिष्णुता जिसकी गद्दी है, जो योगक्षेम के लिए ही स्थित है ।

धीर पुरुष स्वयं ऐसा धर्मयान बनकर सारे लोकों के पार निकल जाता है। यही उसकी परम जय-विजय है । "

इस विशुद्ध धर्मयान में न कहीं कोई कर्मकांडों का कंटक है, न किसी पूजापाठ का विधि-विधान; न कोई अंधभक्तिजन्य भावावेश, न कोई जाति-पाँति का जंजाल, न कोई छूआछूत का रोग, न कोई वर्ण-गोत्र या ऊंच-नीच के भेदभाव की जकड़न है। इसमें न कोई सांप्रदायिक बेड़ियाँ हैं, न कोई कल्पना जन्य दार्शनिक मान्यताओं की भूल-भुलैया है। न कोई व्रत-उपवासों की अतिचर्या है और न कोई वेश-भूषा या बाह्य आडंबरों का मिथ्या प्रदर्शन है। शुद्ध स्वच्छ साधना का धर्मयान है यह ।

दुखियारे लोगों को भव दुखों से नितांत दुःख-विमुक्त होने के लिए ही सभी बुद्ध ऐसा शुद्ध, स्वच्छ, श्वेत धर्मयान देते हैं। लेकिन समय बीतने पर लोग संप्रदायों में उलझ जाते हैं। धर्मयान तो छूट जाता है और उसकी जगह सांप्रदायिक यान प्रमुख हो जाते हैं। जैसे हीनयान, महायान, बज्रयान, तन्त्रयान, मंत्रयान, यन्त्रयान, सिद्धयान, सहजयान और न जाने कितने यान ।

यह सभी यान अपने अपने संप्रदाय-विशेष से जुड़े रहते हैं। पर धर्मयान किसी संप्रदाय से नहीं जुड़ता। वह तो सब का होता है ।

आज के परिवेश में चाहे कोई हिन्दू हो या मुस्लिम, जैन हो या बौद्ध, सिक्ख हो या पारसी, ईसाई हो या यहूदी शुद्ध धर्मयान बड़ी आसानी से धारण कर सकता है और निश्चय ही नितांत दुःख-विमुक्त हो सकता है ।

आओ साधको ! सांप्रदायिक जंजालों से छुटकारा पाकर शुद्ध धर्मयान अपनाएँ और अपनी स्वस्ति-मुक्ति साधें !

कल्याण मित्र,

स. ना. गो

मेरे जीवन के सर्वोत्तम दस दिन

–लक्ष्मीचन्द केनिया 'चन्द'

इस जीवनचक्र के घटनाक्रम में अपना क्या भाग है, यह समझने की कोशिश हर मनुष्य हमेशा करता रहता है। प्रति वर्ष प्रति महीने, प्रति दिन का किस प्रकार से प्रसार हुआ इसका मापदंड स्थिर करता है और इसके आधार पर आगे बढ़ने का मूल्यांकन करता है। आज मैं जब अपने भूतकाल के मापदंड के आधार पर देखता हूँ तो स्पष्टरूप से प्रतीत होता है कि मेरे जीवनके सर्वोत्तम दिन कौनसे थे !

सर्वोत्तम दिवस का भी मापदंड प्रत्येक व्यक्ति भिन्न भिन्न प्रकार से निश्चित करेगा— समय-काल के हिसाब से, वयमान के हिसाब से, एक ही व्यक्ति अपनी समझ और बदलती परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अलग अलग मापदंड निकालेगा। मेरे हिसाब से सर्वोत्तम दिवस की परिभाषा है—जो दिन असीम आनंद तथा शांति के साथ गुजरे हों, जब उस सत्य-ज्ञान की अनुभूति हुई हो जिसमें जीवन की सार्थकता का समावेश हो, जहाँ तन, मन, धन से निःस्वार्थ सेवा में लगे सत्पुरुषों से सम्पर्क एवं परिचय हुआ हो, ऐसे दिवस वास्तव में सर्वोत्तम कहे जाने चाहिए। मेरे जीवन के ऐसे ही अविस्मरणीय दस दिन थे जो मैंने इगतपुरी के विपश्यना केन्द्र में श्री गोयन्काजी के सान्निध्य में २६० वें शिविर में गुजारे। इन दस दिनों में मुझे नव-जीवन मिला, सद्धर्म की जानकारी मिली, जीवन को सार्थक करने की आवश्यकता समझ में आई और जीवन जीने का मार्ग प्राप्त हुआ।

मैं बारह वर्ष अमेरिका में रहा, वहीं पर विद्याध्ययन कर उच्च डिग्री हासिल की। व्यवसाय किया। वहाँ के सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्यों का अध्ययन किया। 'व्यक्ति स्वातंत्र्य' जैसे शब्दों का वास्तविक दैनिक जीवन में उपभोग किया। बारह वर्षों का सुखद, मनोरम अनुभव लेकर भारत लौटा। अपने माता-पिता के साथ बड़े संयुक्त परिवार में सौमनस्यपूर्ण सामंजस्य बैठाने का प्रयत्न बड़े मनोयोग से यथाशक्ति करता रहा। दिन, महीने ही नहीं दो-तीन वर्ष बीत गये किन्तु इस वातावरण के अनुकूल मैं अपने आपको ढाल नहीं पाया। मन में तनाव बढ़ते चले गए। परिवार के सदस्यों के साथ व्यवहार-सामंजस्य नहीं हो पाया। आपस में मनोमालिन्य रहने लगा। संबंधों में अन्तर और कृत्रिमता घुस आयी। हमारी आकांक्षाओं और परिस्थितियों में मेल नहीं रहा। अन्ततः कोई मार्ग न दिखाई देने पर पुनः विदेश जाने का विचार प्रबल होने लगा।

अमेरिका से इस दृढ़ निश्चय के साथ लौटा था कि परिवार के साथ अधिकाधिक सहयोग पूर्वक रहूँगा और परिस्थितियों को अनुकूल बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ूंगा। परन्तु ये निश्चय वास्तविकता के सामने टिक न पाए और अन्ततः अमेरिका का स्वतंत्र एकाकी जीवन ही श्रेयष्कर लगने लगा। परन्तु इसी बीच मानसिक तनावों के कारण अम्ल-पित्त का प्रकोप बढ़ गया। उधर मेरे माता-पिता को मेरे अमेरिका जाकर बसने की बात से

बड़ा आघात लगा। मुझे भी इस बात का संताप कम न था परन्तु अन्य कोई रास्ता सुझाई नहीं दे रहा था। ऐसे समय किसी मित्र ने 'विपश्यना' के दस दिवसीय शिविर को एक अवसर देने की बात कही।

मैं एक जैन परिवार में जन्मा हूँ इसलिए सामायिक, प्रतिक्रमण तथा उपवास आदि का बौद्धिक ज्ञान जरूर था किन्तु ऐसा करने का कोई वास्तविक लाभ है, इससे आश्वस्त नहीं था। मेरे पास समय था। ध्यान सीखने की इच्छा थी अतः बिना किसी विशेष अपेक्षा के उक्त दस दिन के शिविर में चला आया।

इन दस दिनों में मुझे जो कुछ प्राप्त हुआ उसकी तो कभी स्वप्न में भी कल्पना नहीं थी। इस विषय का कभी इस प्रकार चिंतन ही नहीं किया था। मेरी दशा उस व्यक्ति जैसी हुई जो मरुधर में प्यासा भटक रहा हो और थककर चूर हो गया हो। एक प्याले पानी के लिए तरस रहा हो और तभी उसके सामने मीठे शीतल जल का विशाल सरोवर प्रकट हो जाय।

विपश्यना शिविर के दिन एक एक करके बीतते गए और गुरुवर श्री गोयन्काजी अत्यंत प्रेम, मैत्री और करुणापूर्ण मनोयोग से ध्यान साधना सिखाते गए। प्रथम तीन दिन तक आनापान सति और उसके बाद **विपश्यना** का अभ्यास चलता रहा। प्रतिदिन घंटे-डेढ़ घंटे का प्रवचन होता रहा, जिससे धर्म भली भांति स्पष्ट होता गया। भीतर क्या घट रहा है इसका साक्षात्कार होने लगा। अज्ञान के बादल छटने लगे। जीवन की उपयोगिता का रहस्य समझ में आया। छठें दिन ध्यानके समय समता के निर्मल क्षणों में द्वेषमूलक विकारों की निरर्थकता का अनुभूतियों के स्तर पर ज्ञान प्राप्त हुआ। सातवें दिन रागात्मक विकारों की पृष्ठभूमि समझ में आयी। राग तथा द्वेष— इन शब्दों के सही अर्थ समझ में आए। अब कोई प्रश्न ही नहीं बचा जिसका उत्तर पूछा जाय। धर्म संबधी, जीवन संबंधी, वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक सभी प्रश्नों का समाधान होता गया। जैसे किसी जादू की छड़ी के छू जाने से सभी पहेलियों के आड़े-तिरछे सभी प्रश्न हल हो गए हों। जैन मुनियों के सैकड़ों प्रवचन इससे पूर्व सुने थे किन्तु अनुभूति पर न उतरने के कारण राग-द्वेष की व्याख्या समझ में नहीं आयी थी। मेरा जीवन, शरीर, मानस तथा भावनाएँ सब मधुर संगीत की एक ही लय पर बहने लगे। परम शांति तथा सुख का सही रूप में अनुभव होने लगा। आज डेढ़ वर्ष बाद भी इसकी प्रतीति उतनी ही ताजा है।

सही सामायिक, प्रतिक्रमण आदि की उपयोगिता समझ में आई। हर पल, हर क्षण मन को समता में स्थित रखने का लाभ गोचर हुआ। उसकी आवश्यकता महसूस हुई और उसके प्रति सचेष्ठ हुआ।

तनावपूर्ण स्थिति से उत्पन्न अम्ल-पित (ऐसिडिटी) का रोग बिना किसी उपचार के चला गया। शिविर-काल के अनुभवों ने मुझे जीवन का उद्देश्य बता दिया था। कल्याणकारी विचारधारा ने अमेरिका जाने का निर्णय बदल दिया। अब मैं अपने संयुक्त परिवार में मन, वचन, काया से सुमेल सहित रहने में संतुष्ट हूँ।

अपने अनुभवों के आधार पर सबसे मेरा यही अनुरोध है वे शीघ्रातिशीघ्र दस दिवसीय शिविर में भाग लेने को सर्वाधिक प्राथमिकता देकर स्वयं अपने जीवन के सर्वोत्तम दस दिनों का लाभ अवश्य लें और जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य की ओर अग्रसर हों।

विपश्यना विशेष प्रकार से अन्तर्मुखी होकर ध्यान करने की एक प्राचीन पद्धति है जिससे मन के विकारों का उन्मूलन होने लगता है। बिना किसी जाति-पांति, रंग-रूप, देश-काल, बोली-भाषा व सम्प्रदाय के भेदभाव के सबको समानरूप से सिखाई जाती है। इसकी पवित्र परंपरा के अनुसार यह विधि निःशुल्क सिखाई जाती है। भोजन-आवास का भी कोई मूल्य नहीं लिया जाता। इस साधना से लाभान्वित साधकों की विशुद्ध चेतना द्वारा प्रदत्त दान से ही सारी व्यवस्था सुचारुरूप से चलती है। शिविर-प्रशिक्षण के लिए हिन्दी व अंग्रेजी की द्विभाषिक समानान्तर शब्दावलियाँ प्रयुक्त होती हैं।

भारत में इसे सिखाने के लिए तीन केन्द्र हैं — इगतपुरी (महाराष्ट्र), हैदराबाद (आंध्र प्रदेश) जयपुर (राज.) जहाँ कि दस दिन के शिविर में शुद्ध शाकाहारी भोजन की व्यवस्था रहती है। इनके कार्यक्रम पहले से निश्चित होते हैं और केन्द्र के व्यवस्थापकों से पत्राचार करके निःशुल्क जानकारी प्राप्त की जा सकती है। शिविर के लिए आवेदन-पत्र भेजकर पूर्व स्वीकृति प्राप्त करना अनिवार्य होता है।

सब का मंगल हो !

गुजराती मासिक पत्रिका " पगदंडी "
मार्च, ८७ अंक से साभार.

❀

साधकों के उद्‌गार

नासिक के विनायक वडनेरे लिखते हैं, " शांत वातावरणमें बसे धम्मगिरि ने मुझे मोहित किया। पूरे दस दिन बिना बात किए शांत चित्त होकर विपश्यना करना मेरे जैसे परदेश में नौकरी करनेवाले के लिए नयी अनुभूति थी। इन दस दिनों में मुझे अपने आप को पहचानने का मौका मिला। गुरुवर की शांत, गंभीर वाणी में शामको जो प्रवचन होता था वह चित्त को आनंदविभोर कर देता था। शिविर पूरा करके लौटने पर जिन मित्रों को विपश्यना के लिए प्रेरित किया, उन सभी को आनंद मिला। अब मैं चाहता हूँ कि वर्ष में दो बार तो शिविर में जाता ही रहूं।

मेरी शुभ कामनाएँ स्वीकार करें ! "

❀

विपश्यना डायरी

वर्ष १९८७ की '**विपश्यना डायरी**' को लोगों ने बहुत पसन्द किया और प्रकाशन में थोड़ा विलंब होने के बावजूद बहुत जल्द समाप्त हो गयी। अब वर्ष १९८८ की विपश्यना डायरी शीघ्र छपने जा रही है। इसमें कुछ सुधार करके अधिक सुन्दर व आकर्षक बनाने का प्रावधान है। लोगों के आर्डर अभी से प्राप्त हो जाँय तो अधिक मात्रा में डायरी छापना संभव हो सकेगा जिससे कि इसकी कीमत में भी कुछ कमी आ सकती है। अतः सभी इच्छुक साधक/साधिकाएँ वैयक्तिक अथवा व्यापारिक फर्मों के नाम से डायरी छपवाने के लिए अपना आर्डर शीघ्र भेजते हुए अधिक जानकारी के लिए निम्न नाम - पते पर संपर्क करें :–

श्री बिरधीचंद चौधरी,
Vipassana Research Institute, Gandhi Darshan
Exhibition Ground, M. J. Market Rd,
Hyedrabad - 500001. Tel : 553038 Res.–74338

पालि प्रशिक्षण

गत वर्ष **पालि डिप्लोमा** की पढ़ाई सुचारुरूप से हुई और अच्छे परिणाम प्राप्त हुए। अगला सत्र शीघ्र आरंभ होने जा रहा है। इसमें प्रवेश के लिए निम्नतम शैक्षणिक योग्यता हाईस्कूल अथवा इसके समकक्ष परीक्षा में उत्तीर्ण होना तथा विद्यापीठ की नियमावली का कड़ाई से पालन करना अनिवार्य है। प्रवेश - पत्र एवं अन्य विवरण के लिए संपर्क करें :–

निर्देशक, पालि–प्रशिक्षण विभाग
विपश्यना विशोधन विन्यास,
धम्मगिरि, इगतपुरी – ४२२४०३.

नये सहायक आचार्य

पू. गुरुजी ने बम्बई के डॉ. राजीव चोखानी को मई १९८७ में सहायक आचार्य नियुक्त किया।

दोहे धरम के

धरम चित्त की चेतना, धरम चित्त का भाव।
धरम नियति का नियम है, धरम निसर्ग स्वभाव॥

सकल विश्व पर धरम की, अटल हुकूमत होय।
कुदरत का कानून है, सब पर लागू होय॥

हो सजीव, निर्जीव हो, सब कुदरत आधीन।
इस कुदरत को समझ कर, करें दुखों को क्षीण॥

मैलै मन व्याकुल रहे, निर्मल सुखिया होय।
सम्प्रदाय को बदल कर, ऋत से बचा न कोय॥

सम्प्रदाय तो व्यर्थ है, धर्म सार्थक होय।
प्रबल प्रमुखता धरम की, पग पग प्रकटित होय॥

सम्प्रदाय की जकड़ में, मानव व्याकुल होय।
शुद्ध धरम जिसको मिले, हरखित पुलकित होय॥

दूहा धरम रा

सरधा प्रग्या धरम का, घुड़ला जुत्या ललाम।
बणी सारथी सजगता, पकड़्यां चित्त लगाम॥

सील सजावट यान की, अक्छ ह जींको ध्यान।
अस्त्र सस्त्र ईं यान का, प्रेम अहिंसा ग्यान॥

चक्का रथ का वीर्य है, धुरी समाधि समभाव।
लज्जा दँड निस्कामता, चन्दुवो अपणै ठाँव॥

सहिस्णुता गादी सजी, योग क्छेम भरपूर।
धर्मयान साधक बणै, बैरी भाजै दूर॥

लोक लोक नै जीत ले, प्रबल पराक्रम सूर।
तो सहजां भव चक्र का, बन्धन होज्या चूर॥

धर्मयान बढतो चलै, पूगै लोकातीत।
पावै साधक मोक्छ पद, पावन परम पुनीत॥

मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास
बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–११० ००७
की मंगल कामनाओं सहित

विपश्यना विशोधन विन्यास के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२ ४०३. दूरभाष ८६
जेष्ठ पूर्णिमा * मुद्रण स्थान : विपश्यना प्रेस, धम्मगिरि, इगतपुरी. दूरभाष : ७६, १७६ * June 87

वार्षिक शुल्क रु. १०/–
आजीवन शुल्क रु. १००/–

'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71
पोस्टल रजि. नं. NS(M) 16/87

Licence No. NS 18
to post without prepayment

प्रेषक :
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२ ४०३
(जि. नासिक, महाराष्ट्र, मध्य रेल्वे)